M.A sem-2

CC-06

पाश्चात्य ज्ञानमीमांसा (Western Epistemology) की आलोचना

पाश्चात्य ज्ञानमीमांसा (Western Epistemology) ज्ञान के स्वरूप, स्रोत, सीमा और प्रमाणिकता का अध्ययन है। यह मुख्यतः René Descartes, John Locke, David Hume तथा Immanuel Kant जैसे दार्शनिकों के विचारों पर आधारित रही है। इसमें तर्क (Reason), अनुभव (Experience), संशय (Doubt) और प्रमाण (Justification) को प्रमुख आधार माना गया है। परंतु समय के साथ इसकी अनेक आलोचनाएँ भी हुई हैं। नीचे इन आलोचनाओं का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत है।

1. अत्यधिक तर्कवाद और व्यक्तिवाद की आलोचना

पाश्चात्य ज्ञानमीमांसा में ज्ञान को मुख्यतः व्यक्ति के मस्तिष्क की प्रक्रिया माना गया है। René Descartes ने "मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ" (Cogito ergo sum) के माध्यम से आत्मचेतना को ज्ञान का आधार बनाया। आलोचकों के अनुसार यह दृष्टिकोण ज्ञान को सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों से अलग कर देता है। ज्ञान केवल व्यक्तिगत चिंतन का परिणाम नहीं, बल्कि सामाजिक संवाद, परंपरा और सामूहिक अनुभव से भी निर्मित होता है।

2. अनुभववाद की सीमाएँ

John Locke और David Hume जैसे अनुभववादी दार्शनिकों ने ज्ञान का स्रोत इंद्रिय-अनुभव को माना। ह्यूम ने कारण-कार्य संबंध (Causation) पर भी संदेह व्यक्त किया। आलोचना यह है कि केवल इंद्रिय अनुभव पर आधारित ज्ञान अधूरा हो सकता है, क्योंकि इंद्रियाँ भ्रमित भी कर सकती हैं। साथ ही, नैतिक और आध्यात्मिक सत्यों को केवल अनुभव के आधार पर सिद्ध नहीं किया जा सकता।

3. वस्तुनिष्ठता (Objectivity) पर प्रश्न

पाश्चात्य ज्ञानमीमांसा में वस्तुनिष्ठ सत्य की खोज को महत्वपूर्ण माना गया है। किंतु उत्तर-आधुनिक विचारकों ने इस धारणा की आलोचना की। Michel Foucault और Jacques Derrida ने कहा कि ज्ञान सत्ता (Power) और भाषा से प्रभावित होता है। अतः कोई भी ज्ञान पूर्णतः निष्पक्ष नहीं हो सकता। सत्य अक्सर सामाजिक-राजनीतिक संरचनाओं से निर्मित होता है।

4. उपनिवेशवाद और यूरोकेन्द्रिता

पाश्चात्य ज्ञानमीमांसा पर यह आरोप भी लगाया गया है कि यह यूरोकेन्द्रित (Eurocentric) है। इसने यूरोपीय अनुभव और तर्कशैली को सार्वभौमिक सत्य मान लिया तथा एशियाई, अफ्रीकी और आदिवासी ज्ञान-परंपराओं को कमतर आँका। उत्तर-औपनिवेशिक विचारकों का तर्क है कि ज्ञान के अनेक रूप होते हैं और किसी एक परंपरा को श्रेष्ठ मानना अन्यायपूर्ण है।

5. भावनाओं और अंतर्ज्ञान की उपेक्षा

पाश्चात्य परंपरा में तर्क और विश्लेषण को अधिक महत्व दिया गया, जबकि भावनाओं, अंतर्ज्ञान और आध्यात्मिक अनुभूति को गौण समझा गया। आलोचकों का मत है कि मानव ज्ञान केवल बौद्धिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि संवेदनात्मक और आध्यात्मिक अनुभवों से भी समृद्ध होता है।

6. नैतिकता और व्यवहारिक जीवन से दूरी

कुछ आलोचकों के अनुसार पाश्चात्य ज्ञानमीमांसा अत्यधिक सैद्धांतिक है और व्यवहारिक जीवन से दूर हो जाती है। यह ज्ञान की परिभाषा और प्रमाण पर तो विस्तृत चर्चा करती है, परंतु जीवन में उसके उपयोग और नैतिक परिणामों पर कम ध्यान देती है।

7. स्त्रीवादी आलोचना

स्त्रीवादी दार्शनिकों ने तर्क दिया कि पारंपरिक पाश्चात्य ज्ञानमीमांसा पुरुष-प्रधान दृष्टिकोण से विकसित हुई है। इसमें महिलाओं और हाशिए के समूहों के अनुभवों को पर्याप्त महत्व नहीं मिला। स्त्रीवादी ज्ञानमीमांसा “स्थित ज्ञान” (Situated Knowledge) की अवधारणा प्रस्तुत करती है, जिसके अनुसार ज्ञान व्यक्ति की सामाजिक स्थिति से प्रभावित होता है।

निष्कर्ष

पाश्चात्य ज्ञानमीमांसा ने ज्ञान के स्वरूप और सीमा को समझने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। परंतु इसकी आलोचनाएँ यह दर्शाती हैं कि ज्ञान केवल तर्क और अनुभव तक सीमित नहीं है। सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और भावनात्मक आयाम भी ज्ञान की संरचना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अतः आज आवश्यकता है कि विभिन्न परंपराओं के ज्ञान को समन्वित दृष्टि से देखा जाए, ताकि अधिक समग्र और समावेशी ज्ञानमीमांसा विकसित की जा सके।